Indian Journal of Modern Research and Reviews

This Journal is a member of the *'Committee on Publication Ethics'*

Online ISSN:2584-184X

Research Article

सार्वजनिक क्षेत्र (PSUs) के निजीकरण का दलित, पिछड़े और वंचित वर्गों के राजनीतिक/सामाजिक आरक्षण पर प्रभाव

डॉ. अशोक कुमार मीना

सहायक आचार्य,राजनीति विज्ञान राजकीय महाविधालय मासलपुर,करौली राजस्थान, भारत

Corresponding Author: * डॉ. अशोक कुमार मीना

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.21901859

सारांश

वर्ष 1991 के आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) के दौर के पश्चात् भारत की सामाजिक और आर्थिक नीतियों में बुनियादी बदलाव आए हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (PSUs) का रणनीतिक विनिवेश और निजीकरण इस नीतिगत बदलाव का एक मुख्य स्तंभ रहा है। हालांकि, भारतीय संविधान के तहत अनुसूचित जातियों (SC), अनुसूचित जनजातियों (ST) और अन्य पिछड़े वर्गों (OBC) को दिए जाने वाले सामाजिक और राजनीतिक आरक्षण का लाभ मुख्य रूप से सरकारी विभागों और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों तक ही सीमित है।

प्रस्तुत शोध पत्र का प्राथमिक उद्देश्य यह विश्लेषित करना है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का निजीकरण किस प्रकार वंचित, पिछड़े और दलित वर्गों के संवैधानिक आरक्षण, आजीविका के अवसरों, सामाजिक गतिशीलता (Social Mobility) और राजनीतिक सशक्तीकरण को प्रभावित कर रहा है। यह पत्र भारत में सार्वजनिक उपक्रमों की ऐतिहासिक भूमिका, संविधान के अनुच्छेद 16(4) व 16(4A) के तहत सामाजिक न्याय की अवधारणा, निजीकरण के पश्चात् आरक्षित पदों के विलोपन, और निजी क्षेत्र में आरक्षण (Affirmative Action) की मांग जैसे गंभीर आयामों का विस्तृत एवं निष्पक्ष अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन के निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि निजीकरण की तीव्र प्रक्रिया ने औपचारिक क्षेत्र (Formal Sector) में संवैधानिक आरक्षण के दायरे को संकुचित किया है, जिससे सामाजिक विषमता और रोजगार की असुरक्षा बढ़ी है। अंत में, यह शोध पत्र निजी क्षेत्र में सामाजिक उत्तरदायित्व, कौशल विकास और आनुपातिक प्रतिनिधित्व के लिए नीतिगत सिफारिशें प्रस्तुत करता है।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2584-184X
- **Received:** 07-07-2026
- **Accepted:** 04-08-2026
- **Published:** 12-08-2026
- **MRR:**4(8); 2026: 69-75
- **©2026, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

मीना अ. कु. सार्वजनिक क्षेत्र (PSUs) के निजीकरण का दलित, पिछड़े और वंचित वर्गों के राजनीतिक/सामाजिक आरक्षण पर प्रभाव. Indian J Mod Res Rev. 2026;4(8):69-75.

Access this Article Online

www.mrrjournal.in

मुख्य शब्द: सार्वजनिक क्षेत्र (PSUs), निजीकरण, सामाजिक न्याय, आरक्षण, दलित व पिछड़े वर्ग, संवैधानिक संरक्षण, विनिवेश, निजी क्षेत्र में सकारात्मक कार्रवाई।

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

1. प्रस्तावना

भारतीय संविधान का दर्शन केवल राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना तक सीमित नहीं है, बल्कि यह 'सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र' के निर्माण का आह्वान करता है। संविधान सभा में डॉ. बी. आर. आंबेडकर ने आगाह किया था कि "26 जनवरी 1950 को हम अंतर्विरोधों के जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति में हमारे पास समानता होगी, लेकिन सामाजिक और आर्थिक जीवन में असमानता होगी।" इस असमानता को मिटाने के लिए संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से 'सकारात्मक कार्रवाई' (Affirmative Action) अर्थात **आरक्षण नीति** को अपनाया गया।

स्वतंत्रता के पश्चात, भारत ने 'मिश्रित अर्थव्यवस्था' (Mixed Economy) का मॉडल चुना, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (PSUs) को अर्थव्यवस्था के 'कमांडिंग हाइट्स' पर स्थापित किया गया। सार्वजनिक क्षेत्र का उद्देश्य केवल लाभ कमाना नहीं था, बल्कि क्षेत्रीय संतुलन बनाना, रोजगार सृजन करना और समाज के सबसे पिछड़े, शोषित व वंचित वर्गों को मुख्यधारा में शामिल करना था। दशकों तक, सार्वजनिक उपक्रमों ने दलितों (SC), आदिवासियों (ST) और बाद में अन्य पिछड़े वर्गों (OBC) के लिए सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण के सबसे बड़े और भरोसेमंद माध्यम के रूप में कार्य किया।

हालांकि, वर्ष 1991 के आर्थिक संकट के बाद भारत ने नव-उदारवादी आर्थिक मॉडल को अपनाया। इसके तहत घाटे में चल रहे और साथ ही लाभ कमाने वाले कई सार्वजनिक उपक्रमों में सरकारी हिस्सेदारी बेची गई (विनिवेश) या उनका पूर्ण निजीकरण (Privatization) कर दिया गया।

भारतीय संविधान के अनुसार, आरक्षण का संवैधानिक दायरा केवल 'राज्य' (State - अनुच्छेद 12) और उसके स्वामित्व वाले संस्थानों तक सीमित है। जैसे ही किसी सार्वजनिक उपक्रम का निजीकरण होता है, वह संस्थान संविधान के अनुच्छेद 12 की परिधि से बाहर हो जाता है, और वहां लागू आरक्षण नीति स्वतः समाप्त हो जाती है। यह स्थिति दलित, पिछड़े और वंचित वर्गों के लिए एक गंभीर संकट पैदा करती है।

प्रस्तुत शोध पत्र सार्वजनिक क्षेत्र के निजीकरण के इस सामाजिक-राजनीतिक पक्ष का गहन विश्लेषण करता है। यह पत्र इस बात की पड़ताल करता है कि आर्थिक दक्षता और वित्तीय घाटे को कम करने के नाम पर किए जा रहे निजीकरण का खामियाजा भारत के शोषित और वंचित समुदायों को किस रूप में भुगतना पड़ रहा है।

2. शोध की कार्यप्रणाली एवं सैद्धांतिक ढांचा

यह शोध पत्र मुख्य रूप से वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन हेतु प्राथमिक व द्वितीयक स्रोतों से तथ्य एवं आंकड़े एकत्रित किए गए हैं। प्राथमिक स्रोतों में भारत सरकार के भारी उद्योग और लोक उद्यम भारी उद्योग मंत्रालय (Ministry of Heavy Industries and Public Enterprises) के लोक उद्यम सर्वेक्षण (Public Enterprises Survey) की रिपोर्टें, केंद्रीय सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के दस्तावेज, तथा संसदीय समितियों की रिपोर्टें शामिल हैं। द्वितीयक स्रोतों में प्रख्यात समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों और विधि विशेषज्ञों के शोध पत्र, पुस्तकें और नीतिगत समीक्षाएं शामिल हैं।

सैद्धांतिक ढांचा (Theoretical Framework)

इस अध्ययन को स्पष्टता प्रदान करने के लिए 3 प्रमुख सिद्धांतों का सहारा लिया गया है:

1. **सामाजिक न्याय और वितरणात्मक न्याय का सिद्धांत (John Rawls' Theory of Distributive Justice):** जॉन रॉल्स के अनुसार, न्यायपूर्ण समाज वह है जहां सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाए कि वे समाज के सबसे कम सुविधा प्राप्त (Least Advantaged) सदस्यों के लिए अधिकतम लाभकारी हों। सार्वजनिक क्षेत्र में आरक्षण इसी वितरणात्मक न्याय का प्रतीक था।
2. **संवैधानिक नैतिकता का सिद्धांत (Constitutional Morality):** डॉ. बी. आर. आंबेडकर द्वारा प्रतिपादित यह सिद्धांत यह मांग करता है कि राज्य की कोई भी आर्थिक या प्रशासनिक नीति संविधान के मूल ढांचे और उसके द्वारा दिए गए सामाजिक न्याय के वादों के विरुद्ध नहीं होनी चाहिए।
3. **नव-उदारवाद और राज्य का संकुचन (Neoliberalism and Shrinking State):** नव-उदारवादी सिद्धांत 'कम से कम राज्य' (Minimal State) की वकालत करता है। जब राज्य अपने व्यावसायिक और प्रशासनिक कार्यों से पीछे हटता है, तो सार्वजनिक कल्याण और सामाजिक सुरक्षा के प्रति उसकी संवैधानिक जिम्मेदारियां भी कमजोर होने लगती हैं।

3. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: सार्वजनिक क्षेत्र (PSUs) और सामाजिक न्याय का मॉडल

स्वतंत्रता के समय भारत में व्याप्त जातिगत विषमता, भूमिहीनता और अशिक्षा के कारण दलित और पिछड़े वर्ग औपचारिक अर्थव्यवस्था से पूरी तरह बाहर थे। 1956 की औद्योगिक नीति संकल्प (Industrial Policy Resolution) के तहत सार्वजनिक क्षेत्र को सामाजिक परिवर्तन के एक प्रमुख उपकरण के रूप में देखा गया।

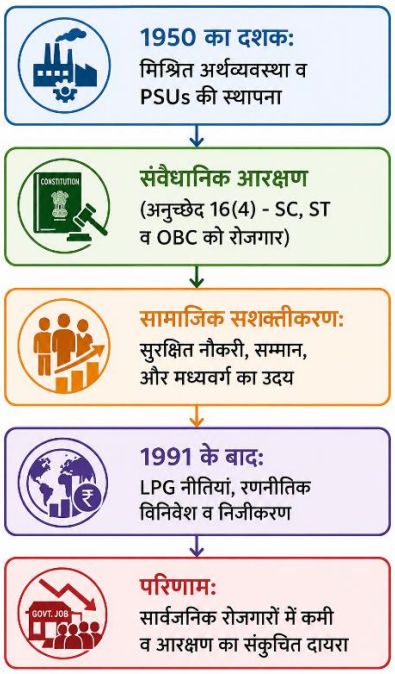

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

3.1 आरक्षण नीति का संवैधानिक आधार

- **अनुच्छेद 16(4):** यह राज्य को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी भी वर्ग के पक्ष में, जिनका राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण हेतु प्रावधान करने की शक्ति देता है।
- **अनुच्छेद 16(4A):** यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सेवाओं में पदोन्नति में आरक्षण का प्रावधान करता है।
- **अनुच्छेद 335:** यह स्पष्ट करता है कि सेवाओं और पदों के लिए दावों पर विचार करते समय अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों की प्रशासनिक दक्षता का ध्यान रखा जाएगा।

3.2 PSUs की सामाजिक भूमिका

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (जैसे भिलाई स्टील प्लांट, बीएचईएल, एनटीपीसी, ओएनजीसी, भारतीय रेलवे, और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक) ने लाखों दलित और पिछड़े वर्ग के नागरिकों को रोजगार दिया। इसने न केवल आर्थिक सुरक्षा प्रदान की, बल्कि निम्नलिखित लाभ भी दिए:

- **जातिगत उत्पीड़न से मुक्ति:** ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक जातिगत शोषण से निकालकर शहरों में सम्मानजनक रोजगार दिया।
- **पीढ़ीगत सामाजिक गतिशीलता (Intergenerational Mobility):** सार्वजनिक उपक्रमों में क्लास 1, 2, 3 और 4 की नौकरियों के माध्यम से वंचित वर्गों का एक नया शिक्षित मध्यवर्ग उभरा।
- **गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और स्वास्थ्य:** पीएसयू की कॉलोनियों, विद्यालयों और अस्पतालों ने वंचित वर्गों के बच्चों को बेहतर जीवन स्तर प्रदान किया।

4. निजीकरण की प्रक्रिया और आरक्षण का संवैधानिक संकट

1991 के बाद से भारत सरकार ने उदारीकरण की नीति के तहत सार्वजनिक उपक्रमों में से अपनी हिस्सेदारी बेचना शुरू किया। 1999 में अटल बिहारी वाजपेयी सरकार के समय 'विशिष्ट विनिवेश मंत्रालय' का गठन किया गया, और 2016 में 'दीपम' (DIPAM - सार्वजनिक संपत्ति प्रबंधन विभाग) की स्थापना की गई।

4.1 निजीकरण के बाद आरक्षण का लोप

निजीकरण की प्रक्रिया मुख्य रूप से तीन तरीकों से होती है:

1. **अल्पसंख्यक विनिवेश (Minority Disinvestment):** सरकार 51% से अधिक शेयर अपने पास रखती है। इसमें आरक्षण लागू रहता है।
2. **रणनीतिक बिक्री (Strategic Sale):** सरकार अपनी 51% या उससे अधिक हिस्सेदारी और प्रबंधन नियंत्रण निजी हाथों में सौंप देती है (जैसे एअर इंडिया, भारत एल्युमीनियम कंपनी - BALCO)।
3. **संपत्ति मौद्रिकरण (Asset Monetization):** सार्वजनिक संपत्तियों को लीज पर निजी क्षेत्र को सौंपना।

संवैधानिक संकट: जैसे ही रणनीतिक बिक्री के माध्यम से किसी पीएसयू का 51% से अधिक शेयर निजी हाथों में जाता है, वह संस्था संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत 'राज्य' नहीं रह जाती। निजी कंपनियां भारत के श्रम कानूनों और संविधान के तहत आरक्षण नीति का पालन करने के लिए बाध्य नहीं हैं।

इसके परिणामस्वरूप, विनिवेश होते ही उस संस्थान में नई भर्तियों में एससी, एसटी और ओबीसी के लिए आरक्षित 15%, 7.5% और 27% (कुल 49.5%) कोटा पूरी तरह से समाप्त हो जाता है।

5. निजीकरण का आरक्षण और रोजगार पर प्रत्यक्ष प्रभाव: आंकड़ों का अध्ययन

सार्वजनिक क्षेत्र में कुल रोजगार और आरक्षित वर्गों के प्रतिनिधित्व का अध्ययन करने से निजीकरण के भयानक प्रभावों का पता चलता है।

5.1 सार्वजनिक उपक्रमों में नौकरियों में गिरावट

लोक उद्यम सर्वेक्षण (Public Enterprises Survey) के आंकड़ों के अनुसार, केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (CPSEs) में नियमित कर्मचारियों की संख्या में पिछले दो दशकों में भारी गिरावट दर्ज की गई है।

वर्ष	केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमों (CPSEs) में कुल नियमित कर्मचारी	SC कर्मचारियों की संख्या	ST कर्मचारियों की संख्या	OBC कर्मचारियों की संख्या
1990	22 लाख 50 हजार	4 लाख 10 हजार	2 लाख 15 हजार	लागू नहीं (मण्डल पूर्व)
2001	17 लाख 40 हजार	3 लाख 18 हजार	1 लाख 42 हजार	2 लाख 80 हजार
2011	13 लाख 90 हजार	2 लाख 48 हजार	1 लाख 15 हजार	2 लाख 55 हजार
2021	8 लाख 60 हजार	1 लाख 45 हजार	72 हजार	1 लाख 85 हजार
2024 (अनुमानित)	7 लाख 80 हजार	1 लाख 28 हजार	63 हजार	1 लाख 70 हजार

स्रोत: लोक उद्यम सर्वेक्षण एवं संसदीय समितियों के संकलित आंकड़े

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

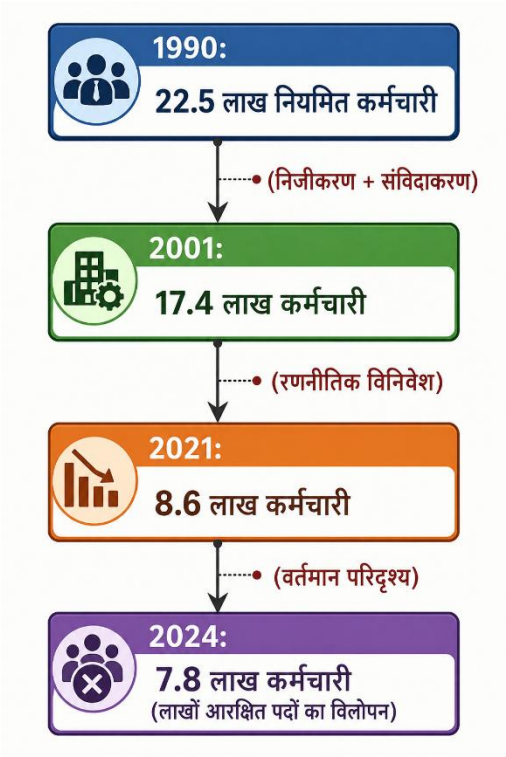

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1990 से 2024 के बीच केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमों में नियमित कर्मचारियों की संख्या में 14 लाख से अधिक की कमी आई है। इसका सीधा अर्थ यह है कि आरक्षित वर्गों (SC, ST, OBC) के लिए उपलब्ध रहने वाले लगभग 7 लाख स्थायी और सुरक्षित रोजगार समाप्त हो गए।

5.2 आउटसोर्सिंग और संविदात्मक (Contractual) नौकरियों का विस्तार

निजीकरण के साथ-साथ सार्वजनिक उपक्रमों में नियमित पदों को खत्म करके 'आउटसोर्सिंग' और 'ठेकेदारी प्रथा' को बढ़ावा दिया जा रहा है।

- **आरक्षण का अभाव:** आउटसोर्सिंग या संविदा पर दी जाने वाली नौकरियों में आरक्षण की कोई संवैधानिक अनिवार्यता नहीं होती।
- **शोषणकारी स्थितियां:** संविदात्मक कर्मचारियों (ज्यादातर दलित व पिछड़े वर्गों के) को नियमित कर्मचारियों की तुलना में 30% से 40% कम वेतन दिया जाता है, और उन्हें स्वास्थ्य, पेंशन या नौकरी की सुरक्षा जैसे सामाजिक सुरक्षा लाभ नहीं मिलते।

6. सामाजिक एवं राजनीतिक सशक्तीकरण पर बहुआयामी प्रभाव

सार्वजनिक क्षेत्र का निजीकरण केवल एक आर्थिक फैसला नहीं है, बल्कि इसके सामाजिक और राजनीतिक परिणाम अत्यंत गंभीर और दूरगामी हैं:

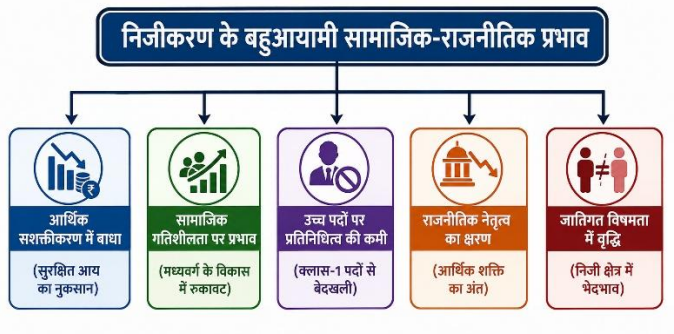

6.1 आर्थिक सशक्तीकरण का क्षरण

दलित और पिछड़े वर्गों के पास ऐतिहासिक कारणों से भूमि, संपत्ति और पूंजी का भारी अभाव रहा है। भारत में कॉर्पोरेट संपत्ति और निजी व्यवसायों पर मुख्य रूप से उच्च जातियों का वर्चस्व है।

- सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियां ही इन वर्गों के लिए पूंजी निर्माण और आर्थिक स्थिरता का एकमात्र साधन थीं। निजीकरण ने इस खिड़की को बंद कर दिया है, जिससे यह वर्ग पुनः आर्थिक रूप से असुरक्षित और असंगठित क्षेत्र की अनिश्चितता पर निर्भर हो गया है।

6.2 उच्च प्रशासनिक पदों (Class-1) पर प्रतिनिधित्व का नुकसान

सार्वजनिक उपक्रमों में क्लास 3 और क्लास 4 पदों पर आरक्षण कोटा तो भर जाता था, परंतु क्लास 1 (प्रबंधकीय और अधिकारी श्रेणी) में आरक्षण के माध्यम से ही वंचित वर्गों के लोग निदेशक, अध्यक्ष (CMD) और महाप्रबंधक जैसे शीर्ष पदों तक पहुँच पाते थे।

- निजीकरण के बाद, निजी प्रबंधन में शीर्ष पदों पर प्रतिनिधित्व पूरी तरह से खत्म हो जाता है, क्योंकि वहां भर्ती का आधार अनौपचारिक नेटवर्क और व्यक्तिगत संदर्भ (Networks and Merit Discourse) होते हैं, जिनमें सामाजिक पूर्वाग्रह हावी रहते हैं।

6.3 राजनीतिक सशक्तीकरण पर अप्रत्यक्ष प्रभाव

आर्थिक शक्ति और राजनीतिक शक्ति आपस में गहराई से जुड़ी हुई हैं।

- **मध्यवर्ग का राजनीतिक प्रभाव:** सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरियों के माध्यम से उभरे दलित और पिछड़े मध्यवर्ग ने ही अपने समुदायों के लिए राजनीतिक चेतना, छात्र आंदोलनों, और सामाजिक-राजनीतिक संगठनों (जैसे BAMCEF, विभिन्न कर्मचारी संघ) को वैचारिक और वित्तीय समर्थन दिया।
- **संगठनात्मक शक्ति का ह्रास:** पीएसयू के निजीकरण से कर्मचारी संघ (Trade Unions) कमजोर हुए हैं। इसके परिणामस्वरूप, आरक्षित वर्गों की वह सामूहिक संगठनात्मक शक्ति नष्ट हो गई है जो सरकार पर सामाजिक न्याय की नीतियों के लिए दबाव बनाती थी।

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

6.4 निजी क्षेत्र में जातिगत पूर्वाग्रह (Caste Discrimination in Private Sector)

प्रसिद्ध समाजशास्त्री सुखदेव थोरात और कैथरीन न्यूमैन द्वारा किए गए अध्ययनों से सिद्ध हुआ है कि भारत के निजी क्षेत्र में भर्ती प्रक्रिया निष्पक्ष नहीं है।

- एक प्रयोग के दौरान, जब समान योग्यता (Merit) वाले दो काल्पनिक आवेदनों में से एक पर दलित नाम (उदा. जाटव, वाल्मीकि) और दूसरे पर उच्च जातीय नाम (उदा. शर्मा, वर्मा) लिखकर निजी कंपनियों में भेजा गया, तो उच्च जातीय नाम वाले आवेदकों को साक्षात्कार (Interview) के लिए **60% अधिक कॉल** प्राप्त हुए।
- यह अध्ययन यह साबित करता है कि बिना कानूनी आरक्षण संरक्षण के, केवल 'योग्यता' के नाम पर निजी क्षेत्र वंचित वर्गों को अवसर देने में पूरी तरह विफल रहा है।

7. निजी क्षेत्र में आरक्षण (Affirmative Action) की मांग और नीतिगत बहस

सार्वजनिक क्षेत्र के सिकुड़ने और निजी क्षेत्र के अभूतपूर्व विस्तार के कारण पिछले दो दशकों से **"निजी क्षेत्र में आरक्षण"** की मांग भारत की राजनीति का एक प्रमुख मुद्दा बनी हुई है।

7.1 निजी क्षेत्र में आरक्षण के पक्ष में तर्क

1. **राज्य द्वारा दी जाने वाली रियायतें:** निजी कंपनियां हवा में काम नहीं करतीं। वे सरकार से सस्ती दर पर जमीन, करों में छूट (Tax Holiday), सस्ती बिजली, और सार्वजनिक बैंकों से अरबों रुपये का कर्ज (Loans) प्राप्त करती हैं। जब निजी क्षेत्र सार्वजनिक संसाधनों का उपयोग करता है, तो उसकी सामाजिक जिम्मेदारी (Social Responsibility) भी होनी चाहिए।
2. **संविधान की भावना:** यदि संविधान का उद्देश्य सामाजिक न्याय और अवसरों की समानता देना है, तो अर्थव्यवस्था के सबसे बड़े रोजगारदाता (निजी क्षेत्र) को इस जिम्मेदारी से बाहर नहीं रखा जा सकता।
3. **अंतरराष्ट्रीय उदाहरण:** संयुक्त राज्य अमेरिका में 'सकारात्मक कार्रवाई' (Affirmative Action) कानून के तहत निजी कंपनियों और ठेकेदारों के लिए अश्वेतों (Blacks) और अल्पसंख्यकों को रोजगार में आनुपातिक प्रतिनिधित्व देना अनिवार्य है। ऐसा ही मॉडल दक्षिण अफ्रीका में 'ब्लैक इकोनॉमिक एम्पावरमेंट' (BEE) के तहत लागू है।

7.2 निजी क्षेत्र में आरक्षण के विपक्ष में तर्क

1. **वैश्विक प्रतिस्पर्धा और दक्षता:** उद्योग जगत (CICC, FICCI, ASSOCHAM) का तर्क है कि अनिवार्य आरक्षण से निजी क्षेत्र की दक्षता, नवाचार और अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मकता प्रभावित होगी।
2. **संवैधानिक सीमाएं:** निजी संपत्तियों और व्यवसायों पर अनुच्छेद 19(1)(g) के तहत व्यापार की स्वतंत्रता का अधिकार लागू होता है।
3. **पूंजी का पलायन (Capital Flight):** कड़े आरक्षण नियमों से भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) प्रभावित हो सकता है और निवेशक अन्य देशों का रुख कर सकते हैं।

8. विभिन्न राजनीतिक दलों का रुख और कानूनी/नीतिगत प्रयास

निजीकरण और आरक्षण के मुद्दे पर भारत के प्रमुख राजनीतिक दलों और सरकारों का रुख समय-समय पर बदलता रहा है:

8.1 राजनीतिक दलों की प्रतिक्रियाएं

- **वामपंथी दल (CPI/CPM):** निजीकरण का पूर्ण विरोध करते हैं और इसे "संवैधानिक अधिकारों पर हमला" तथा पूंजीपति वर्ग के पक्ष में नीतियों का झुकाव मानते हैं।
- **बहुजन समाज पार्टी (BSP) व समाजवादी दल (SP/RJD):** इन दलों का स्पष्ट रुख रहा है कि यदि पीएसयू का निजीकरण किया जा रहा है, तो निजी क्षेत्र में अनिवार्य रूप से SC, ST और OBC आरक्षण लागू करने के लिए संविधान संशोधन किया जाए।
- **कांग्रेस (INC):** 1991 में उदारीकरण की शुरुआत करने वाली कांग्रेस ने बाद में 'मानवीय चेहरे के साथ सुधार' की बात की। 2004 के अपने घोषणापत्र में कांग्रेस ने निजी क्षेत्र में स्वैच्छिक सकारात्मक कार्रवाई (Voluntary Affirmative Action) के लिए उद्योग जगत से संवाद की बात कही थी।
- **भारतीय जनता पार्टी (BJP):** न्यूनतम सरकार और निजीकरण की समर्थक रही है, परंतु सामाजिक असंतोष को देखते हुए सरकार ने "निजी क्षेत्र द्वारा स्वैच्छिक आचार संहिता" (Code of Conduct) अपनाने पर बल दिया है।

8.2 सरकारी प्रयास और उनकी विफलताएं

2004 में केंद्र सरकार ने निजी क्षेत्र में सकारात्मक कार्रवाई की संभावनाएं तलाशने के लिए एक **समिति (प्रेसिडेंशियल कमिटी)** का गठन किया था। उद्योग जगत ने वादा किया था कि वे स्वैच्छिक रूप से वंचित वर्गों के युवाओं के लिए छात्रवृत्ति, कौशल विकास और नौकरियों में प्राथमिकता देंगे।

हालांकि, 20 वर्ष बीत जाने के बाद भी उद्योग जगत का यह स्वैच्छिक मॉडल पूरी तरह विफल साबित हुआ है। किसी भी बड़ी निजी कंपनी ने आरक्षित वर्गों के प्रतिनिधित्व का पारदर्शी आंकड़ा जारी नहीं किया है।

9. निजीकरण और आरक्षण के अंतर-संबंधों का तुलनात्मक विश्लेषण

नीचे दी गई तालिका सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के बीच सामाजिक न्याय, रोजगार और संवैधानिक स्थिति के अंतर को स्पष्ट रूप से दर्शाती है:

मानदंड	सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम (PSUs)	निजी क्षेत्र (Privatized / Private)
संवैधानिक स्थिति	अनुच्छेद 12 के तहत 'राज्य' (बाध्यकारी)।	निजी संस्था (संवैधानिक बाध्यता से मुक्त)।

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

आरक्षण नीति	SC (15%), ST (7.5%), OBC (27%) हेतु कानूनी बाध्यता।	कोई संवैधानिक या कानूनी आरक्षण प्रावधान नहीं।
रोजगार की प्रकृति	स्थायी, सुरक्षित, पेंशन व सामाजिक सुरक्षा युक्त।	संविदात्मक, अस्थाई, कभी भी छंटनी योग्य।
भर्ती में पारदर्शिता	सार्वजनिक विज्ञापन, लिखित परीक्षा, रोस्टर प्रणाली।	अनौपचारिक नेटवर्क, साक्षात्कार, 'मेरिट' का अस्पष्ट ढांचा।
सामाजिक जवाबदेही	संसद, सीएजी (CAG), और एससी/एसटी आयोग के प्रति उत्तरदायी।	केवल शेयरधारकों (Shareholders) और लाभ के प्रति उत्तरदायी।
शीर्ष नेतृत्व में विविधता	रोस्टर व पदोन्नति नीति से आरक्षित वर्गों की पहुँच संभव।	शीर्ष पदों (Board of Directors) पर जातिगत एकाधिकार।

स्रोत: विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों एवं नीतिगत रिपोर्टों का संकलित विश्लेषणात्मक ढांचा)

10. निष्कर्ष एवं सिफारिशें

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (PSUs) का निजीकरण केवल एक वित्तीय या आर्थिक सुधार का मुद्दा नहीं है; यह भारत के सामाजिक ताने-बाने और संवैधानिक वादों से सीधे तौर पर जुड़ा हुआ प्रश्न है। स्वतंत्रता के बाद सार्वजनिक उपक्रमों ने भारत में दलितों, आदिवासियों और पिछड़े वर्गों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने और उन्हें सम्मानजनक सामाजिक स्थिति प्रदान करने में ऐतिहासिक भूमिका निभाई थी।

निजीकरण की अंधी दौड़ ने बिना किसी सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन (Social Impact Assessment) के, औपचारिक क्षेत्र में आरक्षण के अवसरों को अत्यधिक संकुचित कर दिया है। जब राज्य अपने उपक्रमों को निजी हाथों में बेचता है, तो वह वास्तव में उन संवैधानिक अवसरों को भी निजी हाथों में बेच देता है जो सदियों से वंचित रहे समुदायों के लिए आरक्षित थे।

यह स्थिति भारत में एक नए 'सामाजिक असंतोष' को जन्म दे रही है। यदि इस नीतिगत विरोधाभास को जल्द ही हल नहीं किया गया, तो इससे सामाजिक विषमता और गहरी होगी, जिससे भारत के लोकतंत्र की स्थिरता और सामाजिक सौहार्द के सामने गंभीर चुनौतियां उत्पन्न होंगी। आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय एक-दूसरे के विरोधी नहीं हो सकते; एक टिकाऊ लोकतंत्र के लिए दोनों के बीच संतुलन होना अनिवार्य है।

सिफारिशें

1. **निजी क्षेत्र में कानूनी सकारात्मक कार्रवाई (Legislation for Affirmative Action):** भारत सरकार को केवल 'स्वैच्छिक प्रयासों' के भरोसे रहने के बजाय एक व्यापक कानून बनाना चाहिए जो निजी कंपनियों के लिए एससी, एसटी और ओबीसी समुदायों के आनुपातिक प्रतिनिधित्व को अनिवार्य बनाए (अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका के मॉडल की तर्ज पर)।
2. **संबद्धता की शर्त (Public Procurement and Tax Incentives):** जो निजी कंपनियां अपने कार्यबल (Workforce) में आरक्षित वर्गों को आनुपातिक प्रतिनिधित्व देती हैं, केवल उन्हीं को सरकारी ठेके, कर प्रोत्साहन (Tax Subsidies) और बैंकों से रियायती ऋण दिए जाने चाहिए।
3. **आउटसोर्सिंग और संविदात्मक नौकरियों में आरक्षण:** सार्वजनिक उपक्रमों और सरकारी विभागों में आउटसोर्स की जाने वाली या ठेके पर दी जाने वाली सभी नौकरियों में रोस्टर प्रणाली और आरक्षण नीति को तुरंत प्रभाव से कानूनी रूप से अनिवार्य बनाया जाना चाहिए।
4. **निजीकरण से पूर्व 'सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन' (Social Impact Assessment):** किसी भी पीएसयू के विनिवेश या रणनीतिक बिक्री से पहले एक स्वतंत्र संस्था द्वारा यह मूल्यांकन किया जाना अनिवार्य हो कि इस निर्णय से एससी, एसटी और ओबीसी के कितने आरक्षित पद समाप्त होंगे, और उनकी भरपाई कैसे की जाएगी।
5. **वंचित वर्गों के लिए 'पूंजी और उद्यमिता विकास' (Venture Capital & Entrepreneurship):** केवल नौकरी मांगने वाला बनाने के बजाय, सरकार को 'स्टैंड-अप इंडिया' और 'डिक्की' (DICCI) जैसे संगठनों के माध्यम से दलित और पिछड़े वर्ग के उद्यमियों को निजी क्षेत्र में खुद का व्यवसाय स्थापित करने के लिए रियायती दर पर पूंजी और बुनियादी ढांचा उपलब्ध कराना चाहिए।
6. **न्यायपालिका और निजी शिक्षा में आरक्षण का विस्तार:** निजी विश्वविद्यालयों, उच्च शैक्षणिक संस्थानों और उच्च न्यायपालिका में आरक्षण नीति को पारदर्शी तरीके से लागू किया जाए ताकि वंचित वर्गों की क्षमता निर्माण (Capacity Building) हो सके।

संदर्भ सूची

1. आंबेडकर बीआर. स्टेट्स एंड माइनॉरिटीज़: व्हाट आर देयर राइट्स एंड हाउ टू सिक्योर देम. संकलित वांग्मय. खंड 1. नई दिल्ली: डॉ. आंबेडकर प्रतिष्ठान; 1947.
2. थोरात एस, न्यूमैन के. ब्लॉकड बाय कास्ट: इकोनॉमिक डिस्क्रिमिनेशन इन मॉडर्न इंडिया. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2012.
3. थोरात एस, अत्तवेल पी. द लेगेसी ऑफ सोशल एक्सक्लूजन: फॉर्मल मार्केट डिस्क्रिमिनेशन इन इंडिया. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. 2007;42(41):4141-4145.
4. देशपांडे ए. द इकॉनमी ऑफ कास्ट. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2011.
5. जाफ्रेलोट सी. इंडियाज़ साइलेंट रेवोल्यूशन: द राइज़ ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया. लंदन: सी. हर्स्ट एंड कंपनी; 2003.
6. बर्धन पी. द पॉलिटिकल इकॉनमी ऑफ डेवलपमेंट इन इंडिया. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 1998.
7. नागराज आर. इंडेक्स ऑफ इंडस्ट्रियल ग्रोथ एंड इकोनॉमिक रिफॉर्म्स इन इंडिया. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. 2006;41(11).
8. अहलुवालिया एमएस. इकोनॉमिक रिफॉर्म्स इन इंडिया: सिंस 1991. जर्नल ऑफ इकोनॉमिक पर्सपेक्टिव्स. 2002;16(3).
9. पाय एस. दलित एसरशन एंड द अनफिनिश्ड रेवोल्यूशन: द बहुजन समाज पार्टी इन उत्तर प्रदेश. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स; 2002.

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

10. भट्टाचार्य सीपी. प्राइवेटाइजेशन एंड सोशल जस्टिस इन इंडिया. नई दिल्ली: अनामिका पब्लिशर्स; 2015.
11. गुरू जी. ह्युमिलिएशन: दावों और सामाजिक न्याय की राजनीति. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2009.
12. कोहली ए. पॉवर्टी अमिड प्लेंटी इन इंडिया: द पॉलिटिकल इकॉनमी ऑफ न्यू-लिबरल पॉलिसीज. कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस; 2012.
13. शाह जी. कास्ट एंड डेमोक्रेटिक पॉलिटिक्स इन इंडिया. नई दिल्ली: मेंशन बुक्स; 2004.
14. यादव वाई. अंडरस्टैंडिंग द सेकंड डेमोक्रेटिक अपसर्ज. नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स; 2000.
15. सिंह एमपी, रॉय एच. भारतीय राजनीतिक प्रणाली: संरचना एवं प्रक्रिया. नई दिल्ली: टाटा मैक्ग्रा हिल; 2018.
16. वर्मा एके. रिजर्वेशन पॉलिसी एंड द चैलेंज ऑफ प्राइवेटाइजेशन. भारतीय राजनीति विज्ञान पत्रिका. 2018;79(3).
17. रॉय एच. भारत में सामाजिक न्याय और उदारीकरण. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन; 2016.
18. ओमवेद जी. दलितों का सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन; 2004.
19. तिलक जेबीजी. प्राइवेटाइजेशन ऑफ हायर एजुकेशन एंड इक्विटी थ्रेट्स. शिक्षा नियोजन एवं प्रशासन पत्रिका. 2009;23(2).
20. पासवान एस, जयदेव पी. इंसाइक्लोपीडिया ऑफ दलित्स इन इंडिया: सोशल जस्टिस एंड एफर्मेटिव एक्शन. नई दिल्ली: कालपाज पब्लिकेशन्स; 2003.
21. चौधरी केडी. निजीकरण का सामाजिक प्रभाव एवं आरक्षण का भविष्य. नई दिल्ली: अनामिका पब्लिशर्स; 2019.
22. कांस्यप एससी. भारतीय संविधान और सामाजिक न्याय. नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट; 2008.

Creative Commons License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution–Non-commercial–No Derivatives 4.0 International (CC BY-NC-ND 4.0) License. This license permits users to copy and redistribute the material in any medium or format for non-commercial purposes only, provided that appropriate credit is given to the original author(s) and the source. No modifications, adaptations, or derivative works are permitted.

About the Author

डॉ. अशोक कुमार मीना राजनीति विज्ञान के विद्वान एवं शिक्षाविद् हैं। वे राजकीय महाविद्यालय, मासलपुर, करौली, राजस्थान में सहायक आचार्य के पद पर कार्यरत हैं। उनका शैक्षणिक एवं अध्यापन कार्य राजनीति विज्ञान, भारतीय लोकतंत्र, शासन व्यवस्था, राजनीतिक संस्थाओं तथा समकालीन सामाजिक-राजनीतिक मुद्दों के अध्ययन पर केंद्रित है।

© 2026 डॉ. अशोक कुमार मीना. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/